❑ इन्द्रकुमार कठोतिया

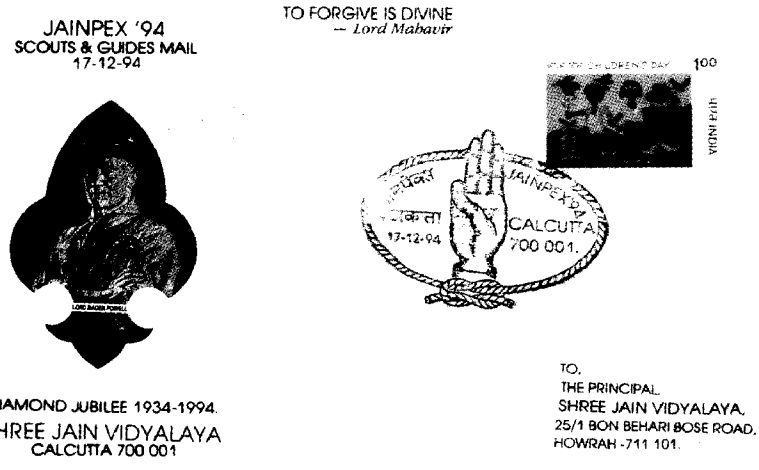

भारतीय सिक्कों की विकास-कथा

मानव की विकास यात्रा के साथ ही आरम्भ होती है विनिमय की कहानी। प्रागैतिहासिक काल में यद्यपि लोगों का जीवनयापन मुख्य रूप से वनजनित संसाधनों पर ही आधारित था तथा उनका कार्य क्षेत्र भी केवलमात्र अपने कबीलों तक ही परिसीमित था। परन्तु शनै: शनै: समाज का गठन होने लगा और विभिन्न कबीलों को आपस में वस्तुओं के चलन के लिए किसी माध्यम की आवश्यकता का अनुभव होने लगा। फलस्वरूप सममूल्य की वस्तुएं आपसी विनिमय का संसाधन बनीं। इस तरह हम दैनिक व्यवहृत वस्तुओं का प्रयोग विनिमय के माध्यम के रूप में देखते हैं। एक समय में गायों तथा धान्य को विनिमय का निमित्त बनाया गया। लेकिन आदान-प्रदान में प्रयुक्त इन वस्तुओं के प्रयोग से बहुत सी कठिनाइयां उत्पन्न होने लगी। यथा गाय की उम्र क्या हो? उसका परिमाण क्या हो? इत्यादि। अत: विभिन्न प्रकार की धातुओं का उपयोग इस कार्य में किया जाने लगा। अंतत: विनिमय के विभिन्न आयामों को ढूंढ़ते-ढूंढ़ते मुद्रा के रूप में विनिमय का समीचीन संसाधन उपलब्ध हुआ।

धातुई मुद्राएं अपने आप में असमानान्तर ऐतिहासिक दस्तावेज हैं जो अपनी थाती में अगणित गाथाओं को आत्मसात् किए हुए हैं। वे हमारे समक्ष उन समस्त ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं आर्थिक गतिविधियों की गाथाओं को उजागर करने में सक्षम हैं जो इनके सृजनकर्त्ताओं के जीवनकाल में घटित हुई होंगी। मुद्राओं से इतिहास के वे भूले-बिसरे पहलू भी उजागर हो उठते हैं जो किसी अन्य स्रोत से सम्भावित नहीं हो पाते। वे हमारे समक्ष काल की सत्य वस्तुस्थिति प्रस्तुत करती हैं। इन मुद्राओं से इतिहास के उन अबूझ प्रश्नों की भी प्रामाणिकता प्राप्त होती है जो अन्य स्रोतों से पूर्ण प्रामाणिक नहीं हो पाते। सिक्कों के माध्यम से न केवल हमारी जानकारी में निरन्तर अभिवृद्धि ही होती है वरन् हमें पूर्व अनुभवों में परिवर्तन एवं परिवर्धन करने का समुचित साधन भी प्राप्त होता रहता है। इस तरह इतिहास अपनी सम्पूर्णता को प्राप्त करता रहता है।

प्राचीन वांङ्मय के बहुलता से न पाए जाने के उपरांत भी सिक्कों की उपलब्धता से प्राचीन भारतीय इतिहास के अनेक विस्मृत आयामों का सही एवं सटीक मूल्यांकन करने में हम सक्षम हो सके हैं। और इनसे न केवल हमें इतिहास में अप्राप्य शासकों एवं विभिन्न पीढ़ियों के बारे में ही जानकारी प्राप्त हुई है वरन् उनके कार्यकलापों एवं मानसिकता का भी बोध हुआ है। क्षेत्रीय तथा आक्रांता दोनों ही तरह के शासकों के बारे में हमें सिक्कों द्वारा ही जानकारी उपलब्ध होती है। ग्रीक, सिरियन एवं मथुरा के आरम्भिक शासक इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं। पंजाब क्षेत्र से ईस्वी सन् 200-100 वर्ष पूर्व की बेक्ट्रियन मुद्राओं से हमें तीस से ऊपर ऐसे शासकों की जानकारी प्राप्त हुई है जो किसी प्राचीन वांङ्मय में उपलब्ध नहीं है। इसी प्रकार बहुत सी जन-जातियों द्वारा ईस्वी सन् से पूर्व एवं तत्पश्चात् प्रचारित मुद्राओं द्वारा ही हमें उन गणतंत्रों का परिचय प्राप्त होता है। यद्यपि व्यापारिक गतिविधियों एवं उसके उन्नयन में मुद्राओं का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध रहा है तथापि उनसे हमें उस समय प्रचलित धार्मिक आस्थाओं के बारे में भी जानकारी मिलती है। इसके अतिरिक्त मुद्राएं तत्कालीन कला वैशिष्ट्य को भी उद्घाटित करती हैं। इससे उस युग के कलाकारों की कार्यकुशलता, उनके ज्ञान एवं उनकी कल्पनाओं की झलक भी हमें प्राप्त होती है। बैक्ट्रियन शासकों, सातवाहन राजाओं एवं गुप्तकालीन स्वर्णमुद्राओं पर उत्कीर्ण विभिन्न राजाओं की छवियां इसका उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। इसी प्रकार मुगलकालीन मुद्राओं पर, विशेषत: जहांगीर द्वारा प्रतिपादित मुद्राओं पर, अंकित विभिन्न प्रकार के राशि चित्रण कला की पराकाष्ठा के द्योतक हैं। अत: मुद्राएं इतिहास एवं कला प्रेमियों- दोनों ही को समान रूप से आकर्षित करने में सक्षम है।

विनिमय-विकास के विभिन्न चरणों का इतिहास हमें प्राचीन भारतीय इतिहास में यत्र-तत्र बिखरा हुआ उपलब्ध होता है। इनमें ऋग्वेद, ऐतेरिय ब्राह्मण, पाणिनि की 'अष्टाध्यायी', गोपथ ब्राह्मण, छान्दोज्ञ उपनिषद्, तैतेरिय ब्राह्मण, श्रौत्र सूत्र, मानव, कात्यायन, वृहदारण्येक उपनिषद् आदि प्रमुख हैं। यद्यपि 800 ई0 पू0 तक भारत में विनिमय के रूप में धातु से बने एक निश्चित परिमाण एवं तौल के पिंड व्यवहृत होने लगे थे किन्तु इस प्रयोग में भी दूषित धातु एवं सटीक वजन की निश्चितता का अभाव अनुभव किया जाने लगा। अत: इन धातुई पिंडों को किसी अधिकृत व्यक्ति द्वारा आहत किया जाना आवश्यक समझा गया जिससे मुद्राओं की शुद्धता एवं सही तौल को सुनिश्चित किया जा सके। इस

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तरह आहत की हुई मुद्राओं का आविष्कार सम्भव हो सका। पांचवीं-छठी श0ई0पू0 लिखित पाणिनि की अष्टाध्यायी के अनुशीलन से हमें तत्समय प्रचलित विभिन्न प्रकार की मुद्राओं एवं उनके अंशों का बोध होता है। इनमें निष्क, सतमान, पद, सन, कर्षापण इत्यादि प्रमुख हैं। अत: हम यह निश्चितता से मान सकते हैं कि पाणिनि काल तक भारतवर्ष में मुद्राओं का प्रचलन पूर्णत: विकसित हो चुका था। इस विकास यात्रा में अत्यधिक समय का लगना अवश्यम्भावी है। चूंकि वेदों तथा आठवीं श0ई0पू0 में लिखित ब्राह्मणों तथा उपनिषदों में इन सिक्कों का कहीं भी उल्लेख न होने से यह सुविदित हो जाता है कि सिक्कों का प्रचलन भारतवर्ष में इस वांङ्मय के लिखे जाने के उपरांत तथा अष्टाध्यायी के लिखे जाने से पूर्व किसी भी समय में हुआ होगा। डॉ. परमेश्वरीलाल गुप्त के अनुसार इस समय को सातवीं शताब्दि ई0पू0 का ठहराया जा सकता है।[1]

हम देख चुके हैं कि प्रागैतिहासिक काल में व्यापारिक गतिविधियां बहुधा सममूल्य की वस्तुओं के आदान-प्रदान तक ही सीमित थीं लेकिन शनै: शनै: बौद्धिक विकास के बढ़ते चरणों ने विनिमय की सर्वमान्य पद्धति को खोजना प्रारम्भ किया। जहां उच्च आदान-प्रदान का माध्यम पशुधन को बनाया गया वहीं निम्न वस्तुओं के विनिमय के लिए मालद्वीप टापू से आयातित कौड़ियों को इसका आधार बनाया गया। मूल्यवान धातुओं की खोज के उपरांत भारतवर्ष में गाय के स्थान पर 'सुवर्ण' का प्रयोग होने लगा। हिन्दुकुश पर्वत एवं नदियों से प्राप्त स्वर्णधूलि का उपयोग भी उच्च वस्तुओं के विनिमय के लिए किया जाने लगा। 'हेरोडोट्स' के मतानुसार 518 ई0पू0 से 350 ई0पू0 में फारस के क्षत्रपों द्वारा संचालित भारतीय क्षेत्र से 360 टेलेंट स्वर्णधूलि कर के रूप में आकीमेनिड साम्राज्य को चुकायी जाती थी।[2] किन्तु बैक्ट्रियन शासकों से पूर्व (पहली दूसरी श0पू0) की स्वर्ण मुद्राएं अभी तक अप्राप्य हैं। सभी प्राचीन मुद्राएं रूपहली धातु में ही मिलती हैं।

जिन्हें आज आहत मुद्राओं (पंचमर्क) के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है वही संस्कृत एवं प्राकृत वांङ्मय में संभवत: 'पुराण' अथवा 'धारण' कहलाते थे। ये मुद्राएं आयताकार अथवा गोल रौप्य एवं कभी-कभी ताम्र धातुओं से बनाई जाती थीं। इन्हें धातुई चद्दरों से निश्चित परिमाण में काटकर एक निश्चित आकार दिया जाता था। तत्पश्चात् इन्हें विभिन्न पंचों द्वारा चिन्हित किया जाता था। इस तरह की 80 टेलेंट आहत रौप्य मुद्राएं लेटिन लेखक क्विट्स करटियस के अनुसार आंभि राजा ने अलेक्जेंडर को तक्षशिला में भेंट की। तक्षशिला की खुदाई में जॉन मार्शल को 160 आहत मुद्राओं का एक जखीरा प्राप्त हुआ था। इस समूह में डायटोडोटस की 245 ई0पू0 की एक मुद्रा भी थी।[3] उपर्युक्त कथनों से हम आसानी से इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि मौर्य साम्राज्य के उत्कर्ष से लेकर तीसरी चौथी शताब्दि ई0पूर्व तक उत्तरी भारतवर्ष में आहत मुद्राएं पूर्ण रूप से स्थापित हो चुकी थीं। गुप्त साम्राज्य के आते-आते तथा चंद्रगुप्त से अशोक काल तक ये मुद्राएं समस्त भारतीय उपमहाद्वीप में पूर्णरूपेण स्थापित हो चुकी थीं।

इन आहत सिक्कों के पश्चात् हमें ताम्र धातु से बने पांचवी शती ई0पू0 के ढलाई के सिक्के प्राप्त होते हैं जो तीसरी शती तक कौशाम्बि, अयोध्या एवं मथुरा राज्यों के द्वारा मुद्रित किए जाते थे। इनमें से कुछ मुद्राओं पर ब्राह्मीलिपि में स्थानीय राजाओं के नाम भी अंकित किए गए हैं।

चौथी शती ई0पू0 तक भारतवर्ष में डाई द्वारा सिक्के तैयार होने लगे थे। इनको केवल एक छोर पर ही मुद्रित किया जाता था। शेर की छवि वाला ऐसा सिक्का तक्षशिला से प्राप्त हुआ है। गांधार क्षेत्र से प्राप्त कुछ मुद्राओं पर अशोक कालीन बौद्ध धर्म के धार्मिक चिन्ह यथा– बोधि वृक्ष, स्वस्तिक, स्तूप इत्यादि परिलक्षित होते हैं। तत्पश्चात् पांचाल, कौशाम्बि एवं मथुरा से दोनों ओर मुद्रित डायी के सिक्के भी जारी हुए। इनमें गांधार से मुद्रित एक ओर शेर तथा दूसरी ओर हाथी की छवियों वाले सिक्के सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं।

कौटिल्य द्वारा प्रणीत चौथी श0ई0पू0 के अर्थशास्त्र से हमें उस समय के सिक्कों के बनाने की पद्धति के विषय में जानकारी मिलती है। विभिन्न ज्यामितीय उपमानों में प्राप्त आहत मुद्राएं महाभारत के 11वीं शीत ई0पू0 के युद्ध के पश्चात् बचे जनपदों एवं महाजन पदों द्वारा जारी की गई थीं। ये सभी जनपद पांचवीं श0ई0पू0 में मगध साम्राज्य के उदय के साथ ही उसमें विलीन हो गए। यद्यपि सर्वप्रथम इन मुद्राओं को किसने जारी किया, यह जानना अत्यन्त कठिन है तथापि हमें सूरसेन, उत्तर एवं दक्षिण पांचाल, वत्स, कुनाल, कौशल, काशी, मल्ल, मगध, बंग, कलिंग, आंध्र, अस्माक, मुलका, अवन्ति, उत्तरी महाराष्ट्र, सौराष्ट्र एवं गांधार क्षेत्रों से मगध साम्राज्य के उदय से पूर्व की मुद्राएं मिलती हैं।

अजातशत्रु के मगध साम्राज्य की बागडोर सम्हालने के साथ ही समस्त भारतवर्ष के निमित्त एक ही तौल के सिक्के प्रचलित किए गए जो द्वितीय श0 पूर्व मगध साम्राज्य के पतन होने तक जारी किए जाते रहे। इन मुद्राओं को 'कार्षापण' अथवा 'पण' के नाम से जाना जाता है। इनके छोटे स्वरूप को 'मेषक' नाम दिया गया है। लेकिन द्वितीय श0ई0पू0 में किसी समय इनके मुद्रण में व्यवधान उपस्थित हुआ, जिसके फलस्वरूप इनकी उपलब्धता में अतिशय ह्रास हुआ। फलत: कतिपय स्थानों पर इन मुद्राओं को ढलाई अथवा डाटू के माध्यम से मुद्रित किया जाने लगा। झूसी, शिशुपालगढ़, मथुरा, कोंडापुर, एरन से उपलब्ध मृद्, मूषिकाएं इनके उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

कौटिल्य प्रणीत अर्थशास्त्र के अनुसार ताम्रधातु की आहत मुद्राएं भी प्रचलित थीं। ये मुद्राएं हमें उज्जैन, मगध, विदिशा, अंग, मथुरा एवं मेवाड़ प्रदेशों से प्राप्त हुई हैं। तत्पश्चात् ताम्र मुद्राएं मूषिकाओं में ढालकर भी बनाई जाने लगीं जो प्राय: समस्त उत्तरी भारतवर्ष में लोकप्रिय थीं। इनका प्रचलन समय तीसरी शताब्दि ई0पू0 से तीसरी शताब्दि तक का आंका जाता है।

326 ई0पू0 में अलेक्जेंडर के भारतवर्ष प्रवेश के साथ ही भारतीय मुद्रा इतिहास में आमूल-चूल परिवर्तन परिलक्षित होता है। और एक नई पद्धति के सिक्के प्रकाश में आते हैं। इन सिक्कों में शासकों तथा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनकी मान्यता प्राप्त देवी देवताओं की छवियां प्रथम बार अंकित की गईं। पुरु के साथ हुए युद्ध में विजय प्राप्त कर अलेक्जेंडर ने चांदी के डेका ड्रेचम एवं टेट्राड्रेचम सिक्के जारी किए। अलेक्जेंडर के मरणोपरांत उसके उत्तराधिकारियों एवं क्षत्रपों द्वारा सिक्के मुद्रित किए जाते रहे और अब तक लगभग बाईस बेक्ट्रियन शासकों द्वारा जारी सिक्के ज्ञात हो चुके हैं। स्वर्ण मुद्रा सर्वप्रथम इन्हीं शासकों में से एक डायोडोटस द्वारा मुद्रित की गई। संसार की सबसे पहली निकेल धातु से बनी मुद्राएं भी इन्हीं शासकों द्वारा यहां जारी की गईं। स्ट्रेटो द्वितीय द्वार शीशे से बने सिक्के भी प्रचलित किए गए। इनके सिक्कों में प्रथम बार लिपि का उपयोग किया गया। ग्रीक भाषा तथा खरोष्ठि लिपि में प्राकृत भाषा का उपयोग इनके सिक्कों पर हुआ है। कुछ शासकों द्वारा ब्राह्मि लिपि का भी प्रयोग किया गया है।

लगभग 135 ई0पू0 से 75 ई0पू0 तक 'शक' लोगों ने बेक्ट्रियन शासन का अंत कर इन्हें भारतवर्ष से विस्थापित कर दिया। इन शक शासकों में सर्वप्रथम माओस एवं वोनोन के चांदी तथा ताम्र धातुओं में मुद्रित सिक्के प्राप्त हुए हैं। इनके उत्तराधिकारी एजेज प्रथम के सिक्के बहुलता से पाए जाते हैं। इसके बाद भी कई शक-पहलवों के सिक्के पाए गए हैं। प्रथम शताब्दि के लगभग कुषाणों के आविर्भाव के साथ ही इन शक-पहलव शासकों का अंत हुआ।

कुषाण चीन की सीमावर्ती क्षेत्र विशेष की घुमंतू जनजातियां थीं जिन्हें यू-ची कहा जाता था। इन्हीं की एक शाखा क्यू-शुआंग (कुषाण) ने उत्तरी भारतवर्ष में अपने शासन को फैलाया। इन्होंने पूर्व में वाराणसी तक अपने राज्य को स्थापित किया तथा पश्चिम में भी भारतीय सीमाओं को उल्लंघित किया। इस तरह से इन्होंने एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की जो लगभग एक शताब्दि तक कायम रहा। इन शासकों में सर्वप्रथम कुजुल कडफिसेज ने ताम्रमुद्राएं जारी कीं। इसके पुत्र विमा कडफिसेज ने सर्वप्रथम भारतवर्ष में सोने के विभिन्न परिमाणों के प्रचुर मात्रा में सिक्के प्रचलित किए। इन मुद्राओं को हम चौथाई दीनार, दीनार तथा दो दीनार के रूप में जानते हैं। विमा कडफिसेज की ताम्रमुद्राओं पर शिव की छवियां भी अंकित हैं जो यह दर्शाती हैं कि वह भारतीय शैव परम्परा से अत्यधिक प्रभावित रहा होगा। विमा कडफिसेज के उत्तराधिकारी हुविष्क प्रथम तथा कनिष्क प्रथम ने भी क्रमश: सिक्के जारी किए। कनिष्क प्रथम ने शिव की छवि वाले सिक्के तो जारी किए ही साथ ही बुद्ध के नाम वाले सिक्के भी मुद्रित करवाए। कनिष्क प्रथम के पश्चात् हुविष्क द्वितीय, हुविष्क तृतीय, वासुदेव प्रथम, वासुदेव द्वितीय, वासुदेव तृतीय, कनिष्क द्वितीय, वसिष्क, कनिष्क तृतीय तथा मम्र ने क्रमश: कुषाण सिक्के जारी किए। लेकिन कुषाणों का ह्रास वासुदेव द्वितीय के समय से होने लग गया। शशेनियन राजाओं ने अरदासिर प्रथम के कार्यकाल में कुषाण क्षेत्रों को विशेषत: गांधार और हिन्दू के पश्चिमी क्षेत्रों को जीतना आरम्भ कर दिया था। इन हस्तगत क्षेत्रों पर राजपरिवार के व्यक्तियों का आधिपत्य किया जाने लगा। इन राजनयिकों द्वारा शशैनियन मुद्राओं से मिलते-जुलते सिक्के जारी किए गए। इनमें से सापुर, अरदासिर प्रथम, अरदासिर द्वितीय, फिरोज प्रथम एवं होरमिड प्रथम, फिरोज द्वितीय, वराहरन प्रथम, वराहरन द्वितीय, होरमिड द्वितीय के सिक्के हमें प्राप्य हैं।

कुषाण राजा कनिष्क तृतीय के समय में सिन्धु नदी के पूर्वी हिस्से, जो कुषाण, अधिकार में थे वे भी नीपूनद, गदाहर, गडाखार, पयास और शक जनजातियों द्वारा हस्तगत किए जाने लगे। शकों ने तो हरियाणा तक के कुछ हिस्सों पर अधिकार कर लिया। इन्होंने भी अपने सिक्के जारी किए। तत्पश्चात् शशेनियन राजाओं द्वारा हस्तगत सीमाओं को एक अन्य जनजाति किदारा ने जीत लिया। इनके द्वारा जारी सिक्कों को 'किदार कुषाण' सिक्कों के नाम से जाना जाता है।

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् उत्तर भारतवर्ष में छोटे-छोटे जनपद पुन: स्वतंत्र होकर अपना राज्य स्थापित करने लगे। पुष्यमित्र शुंग ने 184 ई0 पूर्व में मौर्य साम्राज्य को हस्तगत कर अपने ताम्र आहत सिक्के जारी किए। उनके वंशजों ने विदिशा से भी आहत मुद्राएं जारी कीं। शुंग के पश्चात् कण्व वंशजों ने सिक्के प्रचलित किए। इस प्रकार हम देखते हैं कि गुप्त साम्राज्य के प्रारम्भ होने से पूर्व विभिन्न क्षेत्रीय, जनपदीय एवं राजकीय सिक्के विभिन्न शासकों द्वारा जारी किए गए। ये मुद्राएं आहत सिक्कों के सदृश, डाइ से बनी तथा ढलाई की भी प्राप्त होती हैं। आलेख रहित मुद्राएं गांधार, एरन, उज्जैनी एवं कौशाम्बि आदि स्थानों से प्राप्त हुई हैं तथा आलेख जनित मुद्राएं गांधार, वाराणसी, श्रावस्ति, उदेहिका, सुदवपा, कौशाम्बि, उज्जयिनी, एराकन्य, विदिशा, महिस्मती, कुरार, तगार, त्रिपुरी एवं पुष्कलवती से जारी की गई। इसी प्रकार पंजाब क्षेत्र के जनजातीय गणतंत्रों यथा औदम्बर, कुनिंद एवं यौधेयों द्वारा अपने-अपने देवताओं के नाम से मुद्राएं जारी की गईं। द्वितीय श0ई0पू0 में पंजाब के क्षेत्रों से जिन जनजातीय राजनयिकों ने मुद्राएं प्रचलित कीं उनमें अग्रेय, क्षुद्रक, राजन्य, शिवि, त्रिगर्त एवं यौधेय प्रमुख हैं। प्रथम श0इ0पू0 में हमें औदम्बर, राजन्य, वृष्णि, वेमक एवं कुनिंद शासकों के सिक्के उपलब्ध होते हैं। प्रथम सदी के लगभग इन क्षेत्रों से हमें मालव एवं कुलुत लोगों द्वारा जारी सिक्कों की जानकारी मिलती है। इसी तरह द्वितीय शती के आते-आते एक और जनजातीय यथा अर्जुनायन के सिक्कों के बारे में पता चलता है। विदेशी आक्रमण के भय से इनमें से कतिपय जनजातियां चौथी शताब्दि तक राजस्थान की ओर प्रस्थापित होने लग गईं। उधर गंगा-यमुना के समतलीय क्षेत्रों में उपर्युक्त समय में चार प्रमुख राज्यों की स्थापना हुई यथा शूरसेन, पांचाल, कौशल एवं वत्स। शूरसेन से हमें गौमित्र एवं उसके उत्तराधिकारियों के सिक्के प्राप्त हुए हैं। तत्पश्चात् शेषदत्त एवं उसके उत्तराधिकारियों के सिक्के भी इस क्षेत्र से प्राप्त हुए हैं। दो अन्य शासकों बलभूति एवं अपलता की मुद्राएं भी हमें इस क्षेत्र में परिलक्षित हुई हैं। इनके अतिरिक्त कतिपय विदेशी शासकों राजूवूला एवं उसके उत्तराधिकारियों के भी सिक्के इसी क्षेत्र विशेष से प्राप्त हुए हैं।

उधर पांचाल क्षेत्र से ताम्र सिक्कों की एक पूरी की पूरी श्रृंखला हमें प्राप्त होती है, जिनको बीसियों शासकों ने प्रचलित किया। कौशल

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

क्षेत्र से मूलदेव, वायुदेव, विशाखा देव एवं धनदेव के ढलाई के सिक्के प्राप्त हुए हैं। तत्पश्चात् हमें नरदत्त, ज्येष्ठस्त, शिवदत्त एवं उसके उत्तराधिकारियों के सिक्के प्राप्त हुए हैं। उधर वत्स क्षेत्र से भावघोष, अश्वघोष आदि अठारह शासकों द्वारा जारी मुद्राएं प्राप्त की गई हैं। इसके पश्चात् भी हमें अन्य शासकीय वर्गों का पता चलता है, जिसमें भद्रमघ, वेश्रवन, शिवमघ आदि प्रमुख हैं। अंततः इस क्षेत्र से हमें रूद्र देव के सिक्के प्राप्त होते हैं जो कुषाण सिक्कों के समकक्ष हैं।

परवर्ती शुंग एवं कण्व शासकों द्वारा मुद्रित आहत ताम्र मुद्राएं हमें विदिशा-एरन क्षेत्रों से मिलती हैं। इनमें सातवाहन शासक सत एवं सातकरणी द्वारा जारी सिक्के प्रमुख हैं। सातवाहनों के पश्चात् पूर्व क्षेत्रीय क्षत्रपों द्वारा भी 350 ई0 तक सिक्के जारी किए गए। प्रथम शताब्दि ई0 पू0 में इस क्षेत्र को शकों द्वारा अधिगृहीत किया गया था। हमूगाम, वालक, माहू एवं शोम शासकों द्वारा जारी की गईं मुद्राएं अर्वाचीन ही प्राप्त हुई हैं। इन मुद्राओं के प्राप्त होने से प्राचीन जैन वाङ्मय में वर्णित शक आक्रमणों की गाथाओं की सम्पुष्टि होती है। इसी प्रकार इस क्षेत्र में पद्मावती भी एक स्वतंत्र शासन के रूप में पल्लवित हुई जहां से विशाखादेव, महता, शबलसेन, अमित सेन एवं शिवगुप्त के प्रथम श0 ई0 पूर्व से लेकर प्रथम श0 के मध्य तक सिक्के प्रचलित हुए। द्वितीय शताब्दी में हमें नाग शासन के कम से कम बारह राज्याधिकारियों के सिक्के प्राप्त हुए हैं जो चौथी शताब्दी तक निरन्तर प्रचलन में रहे। महाकौशल (त्रिपुरी) क्षेत्र से हमें मित्र, मघ, सेन एवं बोधि वंशजों के सिक्के मिलते हैं। उड़ीसा क्षेत्र से भी तृतीय शताब्दि में मुद्रित पूरी-कुषाण सिक्के प्राप्त हुए हैं।

मौर्य साम्राज्य के पतन के पश्चात् दक्षिण भारतवर्ष के पाण्ड्या क्षेत्रों से क्षेत्रीय शासक अफसरों द्वारा, जिनको महारथी कहा जाता था, चांदी के आहत सिक्कों के सदृश मुद्राएं जारी की गईं। डाइ से बने सिक्के भी पाण्ड्या, आंध्र एवं चोल क्षेत्रों में द्वितीय श0 ई0 पू0 में जारी हुए। तत्पश्चात् आलेखित सिक्के भी इन क्षेत्रों से जारी हुए। मैसूर-कनारा क्षेत्र से सर्वप्रथम सदाकन नामक महाराष्ट्रीय परिवार द्वारा शीशे के सिक्के जारी किए गए। तत्पश्चात् एक अन्य परिवार 'आनन्द' द्वारा करवार क्षेत्र से सिक्के जारी किए गए। महाराष्ट्र क्षेत्र के कोल्हापुर से महारथी कुर, विलिवाय कुर, शिवालकुर, गोतमी पुत्र आदि के सिक्के जारी किए गए। अन्य एक महारथी परिवार हस्ती द्वारा भी शीशे के सिक्के जारी किए गए। इसी समय के लगभग हमें कुछ राजकीय परिवारों के सिक्के कोट लिंगल में मिलते हैं जिनमें राजा उपाधि से विभूषित किया गया है। इनमें कामवायसिरि, गोभद्र एवं सामगोप, सत्यभद्र एवं दासभद्र के सिक्के प्रमुख हैं। इसी तरह 'साद' परिवार के सिक्कों पर भी राजा की उपाधियां मिलती हैं। विदर्भ से हमें राजा सेवक के सिक्के प्राप्त हुए हैं। इनके पश्चात् सातवाहनों अथवा सातकरनी राजाओं के सिक्कों की एक शृंखला प्राप्त होती है। ये शुंग तथा कण्व शासकों के पतन के पश्चात् 27 ई0 पू0 में विदिशा में शासनस्थ हुए तथा अपने राज्य को पश्चिमी भारत एवं दक्कन में फैलाया। श्री सती (श्वाति) एवं श्री सातकरनी (गौतमी पुत्र सातकरनी) ने अपना राज्य पूर्वी भारत तथा दक्कन में विस्तृत किया। उन्होंने अपने राज्य के विभिन्न स्थानों से विभिन्न प्रकार के सिक्के तांबे, चांदी, पोटीन तथा शीशे की धातुओं में प्रचलित किए। इनके पश्चात् इनके कम से कम दस उत्तराधिकारियों ने क्रमशः सिक्के जारी किए।

दक्षिण में आंध्र शासन के समकालीन रोम में बने सोने एवं चांदी की मुद्राएं रोमन व्यापारियों द्वारा भारतवर्ष में लाई जाती थीं। ये मुद्राएं दक्षिण भारतवर्ष में बहुलता से पाई गई हैं। इन सिक्कों पर कभी-कभी भारतीय शासकों के ठप्पे भी पाए जाते हैं। तीसरी शताब्दि में हमें पूर्वी दक्कन से इक्ष्वाकु शासकों के सिक्के प्राप्त होते हैं। इसके पश्चात् हमें तमिल देश से कालभ्र शासकों के सिक्के प्राप्त होते हैं और कुछ विद्वानों के मतानुसार इन शासकों ने तीसरी शताब्दि से सातवीं शताब्दि के मध्य सिक्के जारी किए। उपर्युक्त समय में शालंकायन राजा चंद्रवर्मन, विष्णु कुंडीन तथा पूर्वी चालुक्य विसमसिद्धि के सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। इसी समय में हमें रामकश्यप गोत्रीय राजाओं के सिक्के भी प्राप्त हुए हैं।

पश्चिमी भारत में सातवाहनों के समकालीन शक पीढ़ी में पूर्वी क्षत्रपों के सिक्के बहुलता से प्राप्त हुए हैं। उनका राज्य गुजरात, सौराष्ट्र एवं मालवा तक फैला हुआ था। उन्होंने 310 ई0 तक 250 वर्षों तक शासन किया तथा अपने सिक्के जारी किए। उनकी दो अलग-अलग शाखाओं की जानकारी हमें उनके सिक्कों ही से प्राप्त होती है। प्रथम शाखा जिसे क्षहरत कहा जाता है तथा दूसरी शाखा करद्मक नाम से पहचानी जाती है। प्रथम पीढ़ी में केवल मात्र दो शासकों भूमक एवं नाहपना के ही सिक्के प्राप्त हुए हैं जबकि दूसरी शाखा के कम से कम सताईस शासकों की मुद्राएं अब तक प्राप्त हो चुकी हैं। प्रथम शाखा के प्रथम शासक भूमक ने तांबे के सिक्के जारी किए जबकि उसके उत्तराधिकारी नाहपना ने चांदी की धातु में सिक्के प्रसारित किए। करद्मक क्षत्रपों ने चांदी, तांबे, शीशे तथा पोटीन धातुओं के सिक्के जारी किए। इन क्षत्रपों के समकालीन एक राजा ईश्वरदत्त की मुद्राएं प्राप्त हुई हैं जिन पर इनकी विरुदावली महाक्षत्रप बताई गई है। यह सम्भवतः उपर्युक्त पूर्वी क्षत्रपों के राज्य की सीमाओं पर कहीं राज्य करते रहे होंगे।

चौथी शताब्दि के प्रारम्भ में हम भारतीय इतिहास के स्वर्णकाल में पहुंचते हैं जब पूर्वी उत्तर प्रदेश अथवा बिहार के किसी छोटे संभाग से गुप्त साम्राज्य का उदय होता है। जो लगभग दो शताब्दियों से अधिक तक स्थापित रह सका। इनका आदि पुरुष पुरुष गुप्त हुआ जिनका प्रपौत्र चन्द्रगुप्त प्रथम 319 ई0 से 350 ई0 तक शासनस्थ रहा और अपने राज्य को सुदूर क्षेत्रों तक विस्तीर्ण किया। उसके पुत्र समुद्रगुप्त ने 350 ई0 से 370 ई0 तक शासन करते हुए अनेक युद्धों में विजयश्री प्राप्त की। उसने अश्वमेध यज्ञ भी किया। इसके पुत्र चन्द्रगुप्त द्वितीय ने 376 ई0 से 414 ई0 के मध्य अपने साम्राज्य की सीमाओं को पश्चिम में कश्मीर तक तथा पूर्व में उड़ीसा तक विस्तृत किया। उसके पुत्र कुमार गुप्त ने 414 ई0 से 450 ई0 के मध्य अपने शासन काल में दो-दो बार अश्वमेध यज्ञ किया तथा अपने साम्राज्य में मध्य भारत के कुछ भूभाग

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गुजरात एवं सौराष्ट्र के हिस्सों को संलग्न किया। लेकिन उसके राजत्वकाल के उत्तरार्द्ध में हूणों ने उसके साम्राज्य के कतिपय भूभाग को उससे छीन लिया। फलस्वरूप उसके उत्तराधिकारी स्कंदगुप्त को 455 ई0 से 467 ई0 तक के अपने शासन समय में अधिकतर अपनी सीमाओं की सुरक्षा में ही व्यस्त रहना पड़ा। अंत में उसने हूणों पर विजय प्राप्त करके दम लिया। बुद्धगुप्त 496 ई0 में शासनारूढ़ हुआ। 500 ई0 तक गुप्त साम्राज्य का पराभव प्रारम्भ हो चुका था और चंद्रगुप्त तृतीय, प्रकाशादित्य, वैन्यगुप्त, नरसिंह गुप्त, कुमार गुप्त तृतीय एवं विष्णु गुप्त शासकों के समय में क्रमश: लुप्त प्राय: हो गया, इन गुप्त शासकों की मुद्राएं अधिकांशत: सोने की प्राप्त होती हैं किन्तु चंद्रगुप्त द्वितीय ने सर्वप्रथम चांदी की मुद्राएं भी 409 ई0 में प्रारम्भ कीं। इसी प्रकार तांबे से बनी मुद्राएं केवल मात्र तीन शासकों— समुद्र गुप्त, चंद्र गुप्त द्वितीय एवं कुमार गुप्त प्रथम की प्राप्त हुई हैं। शीशे से बनी मुद्राएं चंद्रगुप्त द्वितीय, कुमार गुप्त प्रथम एवं स्कंदगुप्त की प्राप्त हुई हैं। इन्हीं शासकों के समकालीन ताम्र मुद्राएं अहिछत्र से हरिगुप्त तथा जयगुप्त की प्राप्त हुई हैं। ये संभवत: शासकीय गुप्त वंशजों की ही किसी शाखा विशेष से रहे होंगे। इसी प्रकार विदिशा तथा एरन संभागों से कुछ छोटे ताम्र सिक्के प्राप्त हुए हैं जिन पर रामगुप्त का नाम अंकित है। यह चंद्रगुप्त द्वितीय का भाई था। चीन की सीमाओं पर बसने वाली जनजाति हूण की एक शाखा ने पांचवीं शती में हिन्दुकुश पारकर गांधार क्षेत्र को हस्तगत कर लिया था तथा गुप्त साम्राज्य के भूभाग की ओर बढ़ने लगे थे। लेकिन गुप्त सम्राट स्कंद गुप्त ने उनका डटकर मुकाबला किया तथा अंतत: उन्हें अपनी सीमाओं से परे हटा दिया। इन हूणों ने पुन: एक बार छठी शताब्दि के प्रारम्भ में तोरमाण के नेतृत्व में भारतवर्ष पर आक्रमण किया तथा पंजाब के रास्ते से उन्होंने पूर्वी भारत तथा मालवा के एक विशाल भूभाग पर अपना आधिपत्य स्थापित किया था। तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल ने उत्तरी भारत के भी हिस्सों को अधीनस्थ कर शकाल में अपनी राजधानी स्थापित किया। उसने 528 ई0 में कश्मीर पर भी अपना राज्य स्थापित की। उसने 528 ई0 में कश्मीर पर भी अपना राज्य स्थापित किया। इन हूणों ने हस्तगत भूभाग पर अपने सिक्के प्रचलित किए। इन्होंने परवर्ती कुषाण तथा गुप्त सिक्कों सदृश चांदी तथा तांबे के सिक्के जारी किए।

उधर पश्चिम भारत में गुप्त साम्राज्य के पतन के उपरांत त्रेकुटक शासकों ने गुजरात के दक्षिणी भूभाग को हस्तगत कर चांदी की मुद्राएं जारी कीं। दहरा सेन तथा व्याघ्र सेन नामक राजाओं की उपर्युक्त रौप्य मुद्राएं हमें पांचवीं शताब्दि के उत्तरार्द्धकाल में मिली हैं। इसी प्रकार पूर्वी भारत में मध्य प्रदेश के छत्तीसगढ़ क्षेत्र तथा संलग्न उड़ीसा क्षेत्र से भी हमें सोने के पतले सिक्के पांचवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध और छठी शताब्दी के प्रारंभ के प्राप्त होते हैं। इन सिक्कों से हमें वराह राजा, भावदत्त राजा और अर्थपति राजा के बारे में जानकारियां उपलब्ध होती हैं। इन्हीं की एक अन्य शाखा के राजाओं— प्रसन्नमात्र, महेन्द्रादित्य और क्रमादित्य के भी सिक्के पाए गए हैं।

गुप्त साम्राज्य के पतन के पश्चात् भारत के राजनैतिक क्षेत्र में अत्यधिक उथल-पुथल परिलक्षित होती है और मुस्लिम शासकों के बारहवीं शताब्दी में आने से पूर्व के काल में सिक्कों की निरन्तरता में भी ह्रास हुआ। इसी समय के लगभग बंगाल में समाचर देव एवं जयगुप्त ने सोने की मुद्राएं छठी शताब्दि में जारी कीं। सातवीं शताब्दि में गौड़ राजा शशांक ने निम्न स्वर्ण धातु के सिक्के ढाले। हमें एक अन्य राजा बीरसेन का भी सिक्का इसी समय में प्राप्त होता है। इसके पश्चात् भी गुप्त राजाओं के अनुकरण वाले सिक्के बंगाल, आसाम आदि क्षेत्रों से प्राप्त हुए हैं। 810 ई0 के आसपास हमें देवपाल राजा के सोने के सिक्के भी मिलते हैं।

उधर उत्तर प्रदेश से हमें थानेश्वर के प्रसिद्ध सम्राट हर्षवर्द्धन के सिक्के प्राप्त होते हैं। तत्पश्चात् आठवीं-नवीं सदी के मध्य वत्सदमन, वप्पुका, केशव और आदि वराह की मुद्राएं प्राप्त होती हैं। गुप्त शासकों से मिलती-जुलती रौप्य मुद्राएं कान्यकुब्ज से ईसान वर्मन, सर्ववर्मन और अवन्ति वर्मन की 550 से 600 ई0 के मध्य की प्राप्त होती है, इसी तरह प्रभाकर वर्धन और शिलादित्य की थानेश्वर से प्राप्त होती हैं। गुप्त सम्राटों की पश्चिमी भारतीय परिमाण की रौप्य मुद्राओं का कलचूरी साम्राज्य के कृष्न राजा ने अनुसरण किया। इस प्रकार के सिक्के जिन पर एक ओर बैल अंकित है, भारत के विशाल भूभाग - मालवा, नासिक, मुंबई, सतारा, सलसेत, बेतुल, अमरावती, राजस्थान इत्यादि क्षेत्रों से पाए गए हैं।

आठवीं सदी में हमें चांदी के छोटे-छोटे सिक्के मध्य भारत एवं पूर्वी भारत से प्राप्त हुए हैं। इन्हें प्रतिहार राजा 'वत्सराज' ने प्रचलित किया था। इसी प्रकार के सिक्के बारहवीं श0 में गुजरात एवं सौराष्ट्र से चालुक्य राजा जयसिंह सिद्धराज के नाम से मिलते हैं। हूणों द्वारा प्रसारित सिक्कों के अनुसरण किए सिक्के इस समय में राजस्थान, गुजरात एवं मालवा से बहुतायत में उपलब्ध हुए हैं। इन्हें हिन्द-शशैनियन सिक्कों के नाम से जाना जाता है। प्रारम्भ में ये सिक्के पतले किन्तु बड़े आकार के होते थे परन्तु शनै: शनै: इनका आकार छोटा होता गया। इन उत्तरार्द्ध सिक्कों को ''गधैया'' सिक्कों के नाम से जाना जाता है। उधर उत्तर प्रदेश से हमें विग्रहपाल के सिक्के प्राप्त हुए हैं। इसके साथ ही हमें प्रतिहार राजाओं— भोज प्रथम, तथा उसके पुत्र विनय कपाल के सिक्के भी मिले हैं। उक्त समय में कोंकण क्षेत्र से शील हरा राजा छित्तराजा के गधैया प्रकार के सिक्के भी प्रकाश में आए हैं। इसी प्रकार के सिक्के राजस्थान से भी प्राप्त हुए हैं। इन पर सोमलेखा का नाम मुद्रित है जो संभवत: 1133 ई0 में राज्य कर रहे साकंभरी राजा अजय पाल देव की पत्नी रही होगी। गधैया सिक्के जो मध्य प्रदेश से प्राप्त हुए हैं वे सम्भवत: ओंकार मान्धाता द्वारा जारी किए गए थे। ये सिक्के प्राय: तांबे अथवा निम्न रौप्य धातुओं से बने थे, जिन्हें बिलन कहा जाता है। इसी समय में पंजाब क्षेत्र से तांबे की धातु के सिक्के भी प्राप्त हुए हैं जिन पर जिसु का नाम मुद्रित किया गया है। कश्मीर में आठवीं श0 में कारकोता राजाओं ने तांबे एवं चांदी मिश्रित सोने के सिक्के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जारी किए। इसके पश्चात् उत्पल राजाओं ने यहां से ताम्र सिक्के जारी किए।

नौवीं सदी के उत्तरार्द्ध में शाही शासकों द्वारा तांबे और चांदी की मुद्राएं गांधार तथा काबुल-अहिंद क्षेत्रों से प्राप्त हुई हैं।

इन सिक्कों के एक ओर घुड़सवार तथा दूसरी ओर बैल को मुद्रित किया गया है। इन्हें स्पलपति देव ने भी प्रसारित किया तथा अन्य अनेक शासकों ने भी इन्हें अपनाया। इन सबमें सामंत देव सर्वप्रसिद्ध हुए हैं। ये सिक्के समस्त उत्तरी भारतवर्ष में बहुप्रचलित हुए। बारहवीं-तेरहवीं शताब्दी के मध्य भी बहुत से राजाओं ने इस प्रकार के सिक्के जारी किए। सामंत देव के नाम के सिक्के अन्य राजाओं ने भी जारी किए जिनमें तोमर राजा सलक्षण पाल, अनंग पाल तथा महिपाल देव प्रमुख हैं। इसके पश्चात् हमें मदनपाल के गढ़वाल क्षेत्र से मुद्रित सिक्के 1080 से 1115 के मध्य प्राप्त होते हैं। इनके पश्चात् साकंभरी के चौहान राजाओं के सिक्के भी हमें प्राप्त होते हैं। इनमें सोमेश्वर देव एवं पृथ्वीराज के सिक्के प्राप्य हैं। 1200 ई0 में हमें बदायूं के राजा अमृतपाल के इसी प्रकार के मिलते-जुलते सिक्के प्राप्त हुए हैं। इसके पश्चात् हमें प्रतिहार राज्य के मलय वर्मन के सिक्के प्राप्त हुए हैं तथा नरवार से चाहड़ देव, आसल देव और गणपति देव के 1235 से 1298 ई0 के एक ही प्रकार के सिक्के प्राप्त हुए हैं। त्रिपुरी क्षेत्र से कलचूरी राजा गांगेय देव ने ग्यारहवीं शताब्दी में सोने के सिक्के जारी किए जिन पर लक्ष्मी की छवि अंकित की गई है। ये मुद्राएं रौप्य एवं ताम्र दोनों ही धातुओं में उपलब्ध होती हैं। इसी प्रकार की लक्ष्मी छवि वाली मुद्राएं मालवा के परमार राजाओं उदयादित्य तथा नरवर्मन ने भी प्रसारित कीं। चंदेलों ने भी इसी से मिलती-जुलती मुद्राएं ग्यारहवीं से तेरहवीं शताब्दी के मध्य प्रचारित कीं। इसी तरह गढ़वाल से गोविंद चंद्र देव, शाकंभरी से चौहान राजा अजयराज तथा बयाना के यदु राजाओं अजयपाल, कुमारपाल तथा महिपाल ने भी इसी प्रकार की मुद्राओं को प्रसारित किया। इसी समय की एक प्रसिद्ध मुद्रा पर रामचंद्रजी की छवि का अंकन किया गया था जिसे संभवत: विग्रहराज ने मुद्रित किया था। रतनपुर के कलचूरी राजाओं द्वारा भी तांबे से बने हनुमान की छवि वाले सिक्के प्रसारित किए गए जो अत्यधिक लोकप्रिय हुए। इसी प्रकार हनुमान की छवि अंकित सिक्के चंदेला शासकों ने भी जारी किए थे।

उधर सुदूर दक्षिण भारत के मैसूर और कनारा क्षेत्रों से कदंब शासकों ने दसवीं-ग्यारहवीं शती में सोने के पद्म-टंका सिक्के प्रचलित किए। इन्हें बनाने के लिए आहत मुद्राओं के मानिंद विधि का अनुसरण किया गया। इनके दोनों ही हिस्सों पर अंकन किया गया। पूर्वी तथा पश्चिमी चालुक्यों, चोलों एवं यादवों ने भी आहत विधि को अपनाया। परन्तु इनके सिक्कों को केवल एक ही छोर पर मुद्रित किया जाता था। पूर्वी चालुक्यों में शक्ति वर्मन, राजा-राज प्रथम के सिक्के न केवल दक्षिण भारत में ही वरन् बर्मा के आराकन क्षेत्र तक विस्तारित हुए। इन्हीं के वंशज राजेन्द्र कुलोटुंगा प्रथम ने कंटाई एवं केरल विजय के उपलक्ष में सिक्के मुद्रित किए। पश्चिमी चालुक्यों में जयसिंह द्वितीय, सोमेश्वर द्वितीय और विक्रमादित्य ने 1015 से 1126 के मध्य सोने के आहत सिक्कों का मुद्रण किया। इन चालुक्यों का पराभव करने वाले विज्जल त्रिभुवन मल्ल ने इसी प्रकार के सिक्के 1156 से 1181 ई0 में जारी किए।

कदंब शासकों की हंगल शाखा द्वारा हनुमान छवि वाली मुद्राएं प्रसारित की गईं। देवगिरि के यादवों ने भी सोने की आहत मुद्राएं प्रचलित कीं। चिल्लम, पंचम, सिंघाना, कृष्ण, महादेव, रामचंद्र राजाओं ने 1185 से 1310 ई0 के मध्य विभिन्न प्रकार की मुद्राएं जारी कीं। कुछ सोने के विचित्र अंग्रेजी के 'वी' प्रकार के सिक्के सतारा से प्राप्त हुए हैं। ये संभवत: ग्यारहवीं श0 में चालुक्य राजाओं द्वारा प्रसारित किए गए थे। डाई द्वारा मुद्रित स्वर्ण मुद्राएं जयकेशी प्रथम, शोमी देव, शिवचित्त एवं हेम्मदि देव द्वारा जारी की गईं। होयशाला के विष्णु वर्धन और नरसिंह ने भी उपर्युक्त प्रकार के सोने के सिक्के 1115 से 1171 शती के मध्य प्रसारित किए। बीजापुर, बेलगाम तथा धाड़बार क्षेत्रों से बारहवीं शताब्दी में शासनस्थ बर्मा-भूपाल द्वारा सिक्के प्रचलित किए गए। कतिपय लेख रहित छोटे सोने के सिक्के प्राप्त होते हैं जिन्हें कोल्हापुर के शिलहारों द्वारा जारी किया गया बताते हैं। मैसूर से प्रसारित छोटे स्वर्ण धातु निर्मित सिक्कों को 'गजपति पगोड़ा' के नाम से जाना जाता है। उधर उड़ीसा में निर्मित कुछ पतले सोने के छोटे सिक्के गंगा राजाओं द्वारा ग्यारहवीं सदी तक जारी हुए। चोल राजाओं ने सर्वप्रथम तमिल देश से चांदी की मुद्राएं जारी कीं। इनके सर्वप्रथम राजा उत्तर चोल ने ये मुद्राएं सबसे पूर्व प्रचलित कीं। इसी प्रकार की मुद्राएं उसके उत्तराधिकारियों राजा-राज प्रथम (985-1016 ई0) राजेन्द्र चोल (1011-1043) द्वारा भी प्रसारित की गईं।

इसी समय में हमें पाण्डया राजाओं द्वारा जारी विभिन्न प्रकार के सिक्के भी प्राप्त होते हैं। 1127 ई0 में हमें वीर केरल वर्मन के चांदी के सिक्के मिले हैं जिन पर मगरमच्छ की आकृति मुद्रित की गई हैं। 1336 ई0 में विजयनगर साम्राज्य की स्थापना के साथ हमें तीन पीढ़ियों के शासकों की जानकारी मिलती है जिन्होंने 1565 ई0 तक इस क्षेत्र पर शासन किया। सन् 1336 से 1356 के मध्य संगम पीढ़ी के प्रथम शासक हरिहर ने हनुमान और गरूड़ को अपने सिक्कों में स्थान दिया। उसके उत्तराधिकारी बुक्का प्रथम ने भी इसी प्रकार के सिक्के जारी किए। हरिहर द्वितीय के सोने के सिक्के पर उमा महेश्वर, लक्ष्मी नारायण एवं लक्ष्मी नरसिंह इत्यादि अंकित किए गए। अन्य एक शासक देवराम ने 1422 से 1466 ई0 में उमा महेश्वर प्रकार के सिक्कों को जारी रखा। तत्पश्चात् हमें 1506 से 1570 ई0 के मध्य तुलुभ शासकों के सिक्के प्राप्त होते हैं। विजयनगर के शासकों के पराभव के साथ ही विभिन्न छोटी-छोटी रियासतों ने अपने सिक्के जारी किए। इनमें मदुरा, तंजोर एवं तिनेवेली के नायक एवं रामनद के सेतुपति प्रमुख हैं। सन् 1291-1323 ई0 के मध्य हमें काकतिया शासकों द्वारा प्रचलित सिक्के भी प्राप्त होते हैं।

कासिम के पुत्र इमामुद्दीन के सिंध प्रदेश में 712 ई0 में प्रवेश के साथ ही मुसलमानों का वर्चस्व भारतवर्ष में प्रारम्भ हुआ। उसके अधिकारियों द्वारा छोटे-छोटे चांदी के सिक्कों का प्रचलन किया गया। इसके पश्चात् उत्तर पश्चिमी भारत पर गजनी के शासक महमूद ने 1001 से 1021 के मध्य कई आक्रमण किए तथा विभिन्न प्रकार के सिक्के भी प्रचलित किए। बाद में भी उसने 1028 ई0 में लाहोर से सिक्के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रसारित किए। महमूद के परवर्ती उत्तराधिकारियों ने गौर के शासकों ने गजनी को हस्तगत कर लाहौर को अपनी राजधानी बनाया और 1051 ई0 के लगभग वहां से सिक्के जारी किए। इन गजनवी शासकों में से हमें फारुखजाद (1052-1059 ई0), इब्राहिम (1059-1099 ई0), बहरामशाह (1118-1152 ई0) और खुशरू मलिक (1160-1187 ई0) के सिक्के प्राप्त हुए हैं। खुशरू मलिक को अपदस्थ करके मुहम्मद गोरी ने 1192 ई0 में थानेश्वर की लड़ाई में पृथ्वीराज चौहान को परास्त कर भारत में प्रथम मुस्लिम साम्राज्य की नींव डाली। उसने सोने, ताम्र मिश्रित चांदी के (बिलन) तथा तांबे के सिक्के जारी किए। इसके पश्चात् हमें महमूद, ताजूद्दीन इलदीज, कुतुबूद्दीन ऐबक, इल्तुतमिस (1211-1236 ई0), रूक्नूद्दीन फिरोज शाह (1235 ई0), जलालुद्दीन, रजिया (1236-1240 ई0), मोयजूद्दीन, बहराम शाह (1240-1242 ई0), गयासुद्दीन बलबन (1266-1287 ई0), मोयजुद्दीन केकुबाद (1287-1290 ई0), शमशुद्दीन केयूमरास (1290 ई0) के सिक्के प्राप्त होते हैं। 1290 ई0 में भारत का शासन अन्य खिलजी शासकों को हस्तान्तरित हो गया। इनमें से हमें जलालुद्दीन फिरोज (1290-1296 ई0), रूक्नुद्दीन इब्राहिम (1296 ई0), अलाउद्दीन मुहम्मद शाह (1296-1316 ई0), कुतुबुद्दीन मुबारक शाह के सिक्के प्राप्त हुए हैं। वे 1320 ई0 में शासनारूढ़ हुए। इनमें हमें गयासुद्दीन तुगलक, मुहम्मद बिन तुगलक, फिरोज शाह तुगलक, तुगलक द्वितीय (1388 ई0), अबूबकर (1318 ई0), मुहम्मद बिन फिरोज (1389-1392 ई0), सिंकदर (1392 ई0) और महमूद (1392-1412) के सिक्के प्राप्त होते हैं। इसी बीच सन् 1398 ई0 में तैमूर ने दिल्ली के सिंहासन पर अपना वर्चस्व स्थापित कर लिया। तत्पश्चात् तुगलक साम्राज्य के अंतिम वंशधर महमूद के मरणोपरांत उसके राजदरबारियों ने शासन की बागडोर दौलत खान लोदी के हाथों में सौंप दी। वह 1413 ई0 में राजसिंहासन पर आरूढ़ हुआ, लेकिन उसे भी खिजरखान ने राज्यच्युत कर सैय्यद वंश का वर्चस्व स्थापित किया। बाद में मुबारक शाह, मुहम्मद बिन फरीद, आलमशाह इत्यादि ने सिक्के जारी किए। सन् 1451 ई0 में बहलोल लोदी ने शासन की डोर सम्भाली। उसके उत्तराधिकारी सिकंदर लोदी इब्राहिम लोदी हुए जिन्होंने अपने सिक्के प्रचलित किए। 1526 ई0 में इब्राहिम लोदी को पानीपत के युद्ध में मारकर बाबर ने मुगल साम्राज्य की नींव डाली। लेकिन उसके उत्तराधिकारी हुमायूं को शेरशाह सूरी ने 1540 ई0 में हटाकर सूरी शासन स्थापित किया। उसने चांदी तथा तांबे के कई सिक्के कई जगहों से प्रसारित किए। इसके उत्तराधिकारी शासकों— इस्लाम शाह (1545-1552 ई0), मुहम्मद आदिल शाह (1552-1553 ई0), इब्राहिम (1553 ई0), सिकंदर सूर (1554 ई0) ने क्रमशः सिक्के जारी किए। शेरशाह ने ही सर्वप्रथम चांदी के सिक्कों का नाम रुपया रखा जो आज भी प्रचलित है।

उपर्युक्त दिल्ली सुलतानों के उच्चाधिकारी जो विभिन्न क्षेत्रों में नियुक्त किए जाते थे जब कभी केन्द्रीय शासन में शिथिलता का आभास पाते अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर अपने सिक्के प्रचारित करने लगते।

इस तरह के सिक्के हमें बंगाल, गुजरात, मालवा और जौनपुर क्षेत्रों के विभिन्न पदाधिकारियों द्वारा जारी किए मिलते हैं। इनके अतिरिक्त कश्मीर क्षेत्र से हमें स्वतंत्र राजाओं के सिक्के भी इस समय में मिलते हैं। सुदूर दक्षिणी क्षेत्रों— मदुरा, दक्कन (बहमनी), बरार (इमाद शाही), अहमदनगर (निजाम शाही), बीजापुर (आदिल शाही), तेलंगाना (कुतुबशाही), बीदार (बारिदशाही) से प्रसारित सिक्के भी हमें प्राप्त हुए हैं।

पानीपत के युद्ध में सन् 1526 ई0 में इब्राहिम लोदी को परास्त कर जहरूद्दीन बाबर ने भारत में मुगल साम्राज्य की नींव डाली थी लेकिन उसके उत्तराधिकारी हुमायूं को सन् 1542 ई0 में शेरशाह सूरी ने पदच्युत कर दिया था। परन्तु उसने पुनः दिल्ली को हस्तगत कर लिया। सन् 1556 ई0 में उसके पुत्र अकबर ने शासन भार सम्भाला। इन तीनों मुगलशासकों के विभिन्न प्रकार के सिक्के हमें प्राप्त होते हैं। इनके पश्चात् क्रमशः हमें जहांगीर (1605-1627 ई0), दावर बख्श (1627 ई0), शाहजहां (1628-1658 ई0) मुराद बख्श (1658 ई0), शाहसूजा (1657-1660 ई0, औरंगजेब (1658-1707 ई0), आजमशाह (1707 ई0), कामबख्स (1707-1708 ई0), शाह आलम बहादुर (1707-1712 ई0), अजिमुसान (1712 ई0), जहांदारशाह (1712 ई0), फारुखसियर (1713-1719 ई0), निकुसियर (1719 ई0), रफूदरजात (1719 ई0), शाहजहां द्वितीय (रफूदौला, 1719 ई0), मुहम्मद इब्राहिम (1720 ई0), मुहम्मद शाह (1719-1748 ई0) अहमदशाह बहादुर (1748-1754 ई0), आलमगीर द्वितीय (1754-1759 ई0), शाहजहां तृतीय (1759-1760 ई0), शाह आलम द्वितीय (1759-1806 ई0), बेदार बख्त (1788 ई0), मुहम्मद अकबर द्वितीय (1806-1837 ई0) तथा बहादुर शाह द्वितीय (1837-1858 ई0) के सिक्के विभिन्न आकार, धातुओं और स्थानों से मुद्रित मिलते हैं।

उपर्युक्त मुस्लिम एवं मुगल शासकों के बढ़ते हुए वर्चस्व के फलस्वरूप चौदहवीं और सोलहवीं सदी के मध्य यद्यपि हिन्दू शासन का बने रहना दूभर हो गया था तथापि हमें कतिपय हिन्दू राजाओं द्वारा मुद्रित सिक्के इस समय के कांगड़ा, मध्य भारत के गोंड़ शासकों, मिथिला, आसाम आदि स्थानों से प्राप्त होते हैं।

मुगल साम्राज्य के पतन के उपरांत हमें मराठा शक्ति के उदय की झलक मिलती है। जब सत्रहवीं शती में महान् शिवाजी द्वारा कोंकण क्षेत्र में अपना राज्य स्थापित किया गया। उन्होंने तथा उनके उत्तराधिकारियों ने राज्य के क्षेत्रफल को अत्यधिक विस्तृत किया। मराठा शक्ति को पेशवाओं के पदार्पण से और अधिक ऊर्जा मिली। इनके विभिन्न प्रकार के सिक्के हमें मिलते हैं। उधर उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र में सन् 1739 में नादिरशाह ने आक्रमण कर दिल्ली तक के क्षेत्र को अपने अधीन कर लिया था। नादिरशाह का कत्ल उसी के एक अधिकारी अहमदशाह द्वारा इन् 1747 में कर दिया गया। इन दुर्रानी शासकों ने भी अपने सिक्के इस समय में प्रसारित किए।

उधर अहमदशाह दुर्रानी के पंजाब क्षेत्र में लगातार हुए हमलों के फलस्वरूप सिक्खों की लीग 'खालसा' का उदय हुआ और उन्होंने 1710 ई0 में अहमदशाह की राजधानी सरहिन्द को तहस-नहस कर दिया। इनके नेता 'बंदा' (सच्चा बादशाह) द्वारा सिक्के प्रचलित किए गए। सन् 1777 ई0 के आसपास नानक शाही सिक्कों का प्रचलन अमृतसर से किया गया। इसके पश्चात् राजा रणजीत सिंह द्वारा भी सिक्के मुद्रित किए गए। मालेरकोटला, जिंद, नाभा, कैताल और कश्मीर के डोगरा

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

राजाओं ने भी रणजीत सिंह के सिक्कों का अनुसरण किया।

सन् 1727 ई0 में अवध के नवाबों द्वारा बनारस से सिक्के मुद्रित किए जाने लगे। ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा बनारस क्षेत्र को हस्तगत कर लिए जाने के उपरांत असफउद्दौला और उसके उत्तराधिकारियों ने लखनऊ से सिक्के प्रसारित किए। रोहिल खंड के अवध शासन में मिल जाने के पश्चात् वहां से भी इनके सिक्के जारी हुए। बाद में गाजीउद्दीन हैदर, नसिरूद्दीन हैदर, मुहम्मद अली, अमजद अली, वाजिद अली ने क्रमश: सिक्के मुद्रित किए। 1857 ई0 में जब भारत वर्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत का आरम्भ हुआ तब अवध में ब्रिजिस कादिर को नवाब वजीर बनाया गया और उसके द्वारा प्रचलित कुछ सिक्के हमें इस अवधि में प्राप्त हुए हैं।

उधर मैसूर क्षेत्र में सन् 1761 ई0 में हैदरअली द्वारा सत्ता सम्भाल लिए जाने के पश्चात् हम विभिन्न प्रकार के सिक्के वहां से प्रचलित हुए देखते हैं। उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने भी बहुत सी धातुओं में विभिन्न प्रकार के सिक्कों का प्रचलन किया। टीपू सुल्तान की मृत्यु के उपरांत सन् 1799 ई0 में मैसूर की सत्ता छ: वर्षीय कृष्ण राजा वाडियार को हस्तान्तरित की गई। उसके नाम से भी सिक्कों का प्रचलन हुआ।

पंद्रहवीं शताब्दी से हम पुर्तगाली, डच, डेनिस, अंग्रेजों एवं फ्रांसिसियों का भारतवर्ष में प्रवेश देखते हैं। व्यापार के साथ-साथ इन्होंने स्थानीय राजनीति में भी सक्रिय भाग लिया तथा भारतीय भूभाग को हथिया कर विभिन्न स्थानों से अपने व्यापारिक संस्थानों के नाम से सिक्कों का प्रचलन किया। इन व्यापारिक संस्थानों में पुर्तगालियों ने सर्वप्रथम वास्कोडिगामा के नेतृत्व में सन् 1498 में कालीकट में प्रवेश किया और उन्होंने बाद में ड्यू, दमन, सलसेत, बेसिन, चोल और मुंबई में तथा सान थोम, हुगली में अपने उपनिवेश स्थापित किए। धीरे-धीरे ये क्षेत्र उनके हाथों से निकलते गए और अंतत: 1961 ई0 में द.यू. दमन और गोआ को भी स्वतंत्र भारतवर्ष में सम्मिलित कर लिया गया। डच लोगों द्वारा प्रथम व्यावसायिक संस्थान पुलिकर मेंसन 1609 में खोला गया तथा सन् 1616 तक उन्होंने सूरत में भी संस्थान स्थापित किया। मालाबार क्षेत्र, मछलीपत्तन, हुगली, कासिम बाजार, ढाका, पटना तथा सूरत, अहमदाबाद और आगरा में भी उनके द्वारा व्यापारिक क्रियाएं चालू की गईं तथा 1759 में चिनसुरा के युद्ध में क्लाइव द्वारा हराए जाने तक उन्होंने विभिन्न जगहों से अपनी कंपनी के सिक्के प्रसारित किए। इसी तरह सन् 1620 में डेनिस लोगों ने नायक शासकों से ट्रंकेबार को प्राप्त किया तथा बाद में पोर्टोनोवो और बंगाल में श्रीरामपुर और बालासोर में भी अपने उपनिवेश स्थापित किए। लगभग दो शताब्दियों तक इन स्थानों से डेनिस लोगों द्वारा सिक्के प्रचलित किए जाते रहे। फ्रांसीसी लोगों द्वारा ली गई अपनी प्रथम औद्योगिक इकाई सन् 1668 में सूरत में स्थापित की तथा सन् 1669 में अन्य इकाई मछलीपत्तन में स्थापित की। 1673 ई0 में उन्होंने वालिकोंडिपुरम के गवर्नर से एक गांव प्राप्त कर पांडीचेरी की स्थापना की। बंगाल में भी उन्होंने सन् 1690 में चंदननगर में औद्योगिक इकाई की स्थापना की। सन् 1725 में उन्होंने माहे को तथा 1734 में कारीकल को अधिग्रहित कर लिया। लेकिन 1815 ई0 तक फ्रांसिसियों को अंग्रेजों के हाथों राजनैतिक असफलताओं का सामना लगातार करना पड़ा। इस अवधि के मध्य उन्होंने विभिन्न प्रकार की मुद्राएं विभिन्न आकार-प्रकार एवं धातुओं में प्रचलित कीं।

सन् 1613 ई0 में अंग्रेजों को जहांगीर द्वारा सूरत में व्यावसायिक प्रतिष्ठान प्रारम्भ करने की अनुमति दिए जाने के साथ ही उनका भारतीय राजनैतिक क्षेत्र में प्रवेश होता है। धीरे-धीरे अंग्रेजों ने अपने व्यापारिक संस्थान आगरा, अहमदाबाद और भरोच में भी स्थापित किए। सन् 1668 ई0 में अंग्रेजों ने पुर्तगालियों से मुंबई को चार्ल्स द्वितीय की केथरीन के साथ विवाहोपलक्ष में दहेज के रूप में प्राप्त किया। धीरे-धीरे उन्होंने विभिन्न जगहों में व्यापारिक संस्थान खोले और सत्तरहवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक अपने व्यवसाय को सर्वत्र भारत में फैलाया। लेकिन सत्रहवीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध से उन्होंने राजनैतिक एवं सामरिक हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया और 1834 ई0 तक उन्होंने समस्त भारतवर्ष पर अपना कब्जा स्थापित कर लिया। यद्यपि 1857 में भारतीय लोगों ने उनके विरुद्ध आंदोलन शुरू कर दिया था परन्तु हमें स्वतंत्रता सन् 1947 में जाकर मिली तथा अंग्रेजी साम्राज्य का अंत हुआ। इस लम्बी अवधि में अंग्रेजों ने भी विभिन्न आकार-प्रकार के सिक्कों का मुद्रण किया।

स्वाधीन भारत ने सन् 1950 तक किसी भी प्रकार के सिक्के नहीं प्रचलित किए। 1950 के 15 अगस्त के दिन पहला भारतीय सिक्का जारी किया गया। सन् 1957 में भारत वर्ष में दसमलव प्रणाली के सिक्के प्रचलित किए गए जिन्हें "नया पैसा" कहा जाता था। ये सिक्के 1 जून, 1964 तक निरन्तर प्रचलन में रहे। इसके बाद से "नया पैसा" शब्द को सिक्कों से हटा दिया गया। इनके अतिरिक्त बहुत से महत्वपूर्ण व्यक्तियों तथा विषयों पर विशेष प्रकार के सिक्के भी प्रचलित हुए। इस तरह निरन्तर भारतीय सिक्कों का प्रचलन विभिन्न आकार-प्रकार और इकाइयों में हो रहा है और भारतीय सिक्कों की कहानी अपनी तारतम्यता बनाए रख पा रही हैं।

सन्दर्भ

1. कोयन्स ऑफ एन्सियेंट इंडिया - ए. कनिंघम
2. कोयन्स - सी. जे. ब्राउन
3. कोयन्स - परमेश्वरीलाल गुप्ता
4. केटलोग ऑफ कॉयन्स इन द ब्रिटिश म्यूजियम - जे. एलन, एस. लेनपूल इत्यादि।
5. केटलोग ऑफ कॉयन्स इन द पंजाब म्यूजियम - आर. बी. व्हाइहेड
6. केटलोग ऑफ कॉयन्स इन द इण्डियन म्यूजियम - वी. स्मिथ एवं एनराइट
7. द कायनेज एंड मेट्रोलोजी ऑफ द सुल्तानस ऑफ देल्ही - एच. एन. राइट
8. केटलोग ऑफ कायन्स ऑफ द सुलतान्स ऑफ देल्ही - लखनऊ म्यूजियम, प्रयाग दयाल
9. स्टडीज इन मुगल न्युमिसमेटिक्स - एस. एच. होडीवाला
10. कोयन्स ऑफ मीडियेवल इंडिया - ए0 कनिंघम
11. केटलोग ऑफ द कॉयन्स इन आसाम म्यूजियम - ए0 डब्ल्यू0 बोथम
12. द स्टेंडर्ड गाइड टू साउथ एसीयन कोयन्स - कोलिन आर ब्रुस, जे. एस. डायल इत्यादि।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org